परशुराम की प्रतीक्षा

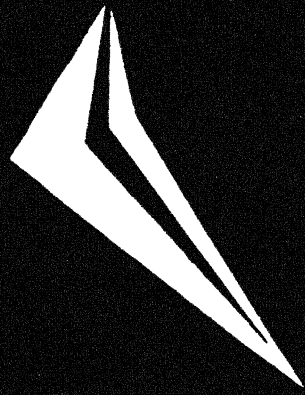

दिनकर

८११.६
राम/प

परशुराम की प्रतीक्षा

रामधारी सिंह दिनकर

KEAMS

राष्ट्रकवि दिनकर पथ
राजेन्द्रनगर पटना-८०००१६

प्रकाशक
केदार नाथ सिंह
उदयाचल,
महाकवि दिनकर पथ
राजेन्द्र नगर
पटना 800 016

© केदार नाथ सिंह

प्रथम संस्करण जनवरी, १९६३
द्वितीय संस्करण मार्च १९६५
पुनर्मुद्रण अगस्त १९८६

मूल्य इक्कीस रुपये (Rs 21 00) मात्र

मुद्रक
वीरेन्द्र कुमार शर्मा,
डी० एस० प्रिण्टस द्वारा रुचिका प्रिण्टस
नवीन शाहदरा, दिल्ली 110 032

दो शब्द

(प्रथम सस्करण)

इस सग्रह मे कुल अठारह कविताए है जिनमे से पन्द्रह ऐसी है जो पहले किसी भी सग्रह म नही निकली थी। केवल तीन रचनाए सामधेनी स लेकर यहा मिला दी गयी है। यह इसलिए कि इन कविताओ का असली समय अब आया है।

नेफा-युद्ध के प्रसग मे भगवान परशुराम का नाम अत्यन्त समीचीन है। जब परशुराम पर मात हत्या का पाप चढा वे उससे मुक्ति पाने को सभी तीर्थों मे घमते फिरे किन्तु कही भी परशु पर से उनकी वज्रमूठ नही खुली यानी उनके मन स से पाप का भान नही दूर हुआ। तब पिता ने उनसे कहा कि कैलास के समीप जो ब्रह्मकुण्ड है उसमे स्नान करन स यह पाप छूट जायगा। निन्नान, परशुराम हिमालय पर चढकर कलास पहुँचे और ब्रह्मकुण्ड मे उन्होने स्नान किया। ब्रह्मकुण्ड म डुबकी लगाते ही परशु उनके हाथ से छूट कर गिर गया अथात उनका मन पाप मुक्त हो गया।

तीथ का इतना जाग्रत देखकर परशुराम के मन मे यह भाव जगा कि इस कुण्ड के पवित्र जल को पथ्वी पर उतार देना चाहिए। अतएव, उन्होने पवत काट कर कुण्ड से एक धारा निकाली जिसका नाम ब्रह्मकुण्ड से निकलने के कारण ब्रह्मपुत्र हुआ। ब्रह्मकुण्ड का एक नाम लोहित कुण्ड भी मिलता हे। एक जगह यह भी लिखा ह कि ब्रह्मपुत्र की धारा परशुराम ने ब्रह्मकुण्ड से ही निकाली थी किन्तु आगे चलकर वह धारा लोहित-कुण्ड नामक एक अन्य कुण्ड मे समा गयी। परशुराम न उस कुण्ड से भी धारा को आगे निकाला, इसलिए, ब्रह्मपुत्र का एक नाम लोहित भी मिलता है। स्वय कालिदास ने ब्रह्मपुत्र को लोहित नाम से ही अभिहित किया है। और जहा ब्रह्मपुत्र नदी पवत से पृथ्वी पर अवतीण होती हे, वहा आज भी परशुराम कुण्ड मोजूद है, जो हिन्दुओ का परम पवित्र तीथ माना जाता हे।

लोहित में गिर कर जब परशुराम का कुठार पाप मुक्त हो गया तब उस कुठार से उन्होंने एक सौ वर्ष तक लगाया नदी और समन्तपंचक में पांच शोणित ह्रद बना कर उन्होंने पितरों का तर्पण किया। जब उनका प्रतिशोध शान्त हो गया उन्होंने कोंकण के पास पहुँच कर अपना कुठार समुद्र में फेंक दिया और वे नवनिर्माण में प्रवृत्त हो गये। भारत का वह भाग, जो अब कोंकण और केरल कहलाता है भगवान परशुराम का ही बसाया हुआ है।

लोहित भारतवर्ष का बड़ा ही पवित्र भाग है। पुराकाल में वहां परशुराम का पाप मोचन हुआ था। आज एक बार फिर लोहित में ही भारतवर्ष का पाप छूटा है। इसीलिए भविष्य मुझे आशा से पूर्ण दिखाई देता है।

ताण्डवी तेज फिर से हुंकार उठा है
लोहित में था जो गिरा, कुठार उठा है।

कलकत्ता
९ १ ६३ ई०

रामधारी सिंह दिनकर

द्वितीय संस्करण की भूमिका

खुशी की बात है कि "परशुराम की प्रतीक्षा" का द्वितीय संस्करण प्रकाशित हो रहा है। जनता ने इस कविता के प्रति जो प्रेम और उत्साह दिखाया है वह इस बात का प्रमाण है कि हमारी जाति का समीपवर्ती भविष्य उज्ज्वल और महान है।

प्रथम संस्करण में "आज कसौटी पर गाधी की आग है" नामक कविता में एक पद छपने से छूट गया था। वह कमी इस बार पूरी की जा रही है।

भागलपुर
७ ३ ६५ ई०

रामधारी सिंह दिनकर

कविताक्रम

	कविताए	पष्ठ
१	परशुराम की प्रतीक्षा	९
२	जवानिया	३४
३	हिम्मत की रोशनी	३७
४	लोह क मद	४०
५	जनता जगी हुइ ह	४१
६	आज कसाटी पर गाधी की आग ह	४३
७	जोहर	४७
८	आपद्धम	४९
९	पाद टिप्पणी (युद्धकाव्य की)	५४
१	शातिवादी	५७
११	अहिंसावादी का युद्ध गीत	५९
१२	इतिहास का न्याय	६०
१३	एनार्की	६२
१४	एक बार फिर स्वर दो १	६९
१५	एक बार फिर स्वर दो-२	७१
१६	तब भी आता हूँ मै	७३
१७	समर शेष है	७६
१८	जवानी का झण्डा	७९

KEAMS

परशुराम की प्रतीक्षा

KEAMS

परशुराम की प्रतीक्षा

खण्ड एक

गरदन पर किसका पाप वीर ! ढोते हो ?
शोणित से तुम किसका कलक धोते हो ?

उनका, जिनमे कारुण्य असीम तरल था,
तारुण्य-ताप था नही, न रच गरल था ,
सस्ती सुकीर्त्ति पा कर जो फूल गये थे,
निर्वीय कल्पनाओ मे भूल गये थे ,

गीता मे जो त्रिपिटक-निकाय पढते है,
तलवार गला कर जो तकली गढते है ,
शीतल करते है अनल प्रबुद्ध प्रजा का,
शेरो को सिखलाते है वम अजा का ,

सारी वसुन्धरा मे गुरु-पद पाने को,
प्यासी धरती के लिए अमृत लाने को
जो सन्त लोग सीधे पाताल चले थे,
(अच्छे हैं अब, पहले भी बहुत भले थे।)

हम उसी धर्म की लाश यहाँ ढोते है,
शोणित से सन्तो का कलक धोते है।

खण्ड दो

हे वीर बन्धु ! दायी है कौन विपद का ?
हम दोषी किसको कहे तुम्हारे वध का ?

यह गहन प्रश्न, कैसे रहस्य समझाये ?
दस-बीस अधिक हो तो हम नाम गिनाये।
पर, कदम-कदम पर यहाँ खडा पातक है,
हर तरफ लगाये घात खडा घातक है।

घातक है, जो देवता-सदृश दिखता है,
लेकिन, कमरे मे गलत हुक्म लिखता है।
जिस पापी को गुण नही, गोत्र प्यारा है,
समझो, उसने ही हमे यहा मारा है।

जो सत्य जान कर भी न सत्य कहता है,
या किसी लोभ के विवश मूक रहता है,
उस कुटिल राजतन्त्री कदय को धिक् है,
यह मूक सत्यहन्ता कम नही वधिक है।

चोरो के हैं जो हितू, ठगो के बल है,
जिनके प्रताप से पलते पाप सकल है,
जो छल-प्रपच सब को प्रश्रय देते है,
या चाटुकार जन से सेवा लेते है,

यह पाप उन्ही का हमको मार गया है,
भारत अपने घर मे ही हार गया है।

है कौन यहा कारण जो नही विपद का?
किस पर जिम्मा है नही हमारे वध का?
जो चरम पाप है हमे उसी की लत है,
दैहिक बल को कहता यह देश गलत है।

नेता निमग्न दिन-रात शान्ति-चिन्तन मे,
कवि-कलाकार ऊपर उड रहे गगन मे।
यज्ञाग्नि हिन्द मे समिध नही पाती है,
पौरुष की ज्वाला रोज बुझी जाती है।

ओ बदनसीब अन्धो! कमजोर अभागो?
अब भी तो खोलो नयन, नीद से जागो।
वह अघी, बाहुबल का जो अपलापी है,
जिसकी ज्वाला बुझ गयी, वही पापी है।

जब तक प्रसन्न यह अनल, सुगुण हँसते है,
है जहा खड्ग, सब पुण्य वही बसते है।
वीरता जहा पर नही, पुण्य का क्षय है,
वीरता वहा पर नही, स्वार्थ की जय है।

तलवार पुण्य की सखी, धर्मपालक है,
लालच पर अकुश कठिन, लोभ-सालक है।
असि छोड, भीरु बन जहा धर्म सोता है,
पातक प्रचण्डतम वही प्रकट होता है।

तलवारे सोती जहा बन्द म्यानो मे,
किस्मते वहा सडती है तहखानो मे।
बलिवेदी पर बालियाँ-नथे चढती है,
सोने की ईंटे, मगर, नही कढती है।

पूछो कुबेर से कब सुवर्ण वे देगे?
यदि आज नही तो सुयश और कब लेगे?
तूफान उठेगा प्रलय-वाण छूटेगा,
है जहाँ स्वण बम वही, स्यात, फूटेगा।

जो करे वित्तु कचन यह नही बचेगा,
शायद, सुवण पर ही सहार मचेगा।
हम पर अपने पापो का बोझ न डाले,
कह दो सब से, अपना दायित्व सँभाले।

कह दो प्रपचकारी, कपटी, जाली से,
आलसी, अकमठ, काहिल, हडताली से,
सी ले जबान चुपचाप काम पर जाये,
हम यहाँ रक्त वे घर मे स्वेद बहाये।

हम देगे तुम को विजय, हमे तुम बल दो,
दो शस्त्र और अपना सकल्प अटल दो।
हो खडे लोग कटिबद्ध वहाँ यदि घर मे,
है कौन हमे जीते जो यहा समर मे?

हो जहाँ कही भी अनय उसे रोको रे!
जो करे पाप शशि-सूय, उन्हे टोको रे!

जा कहो, पुण्य यदि बढा नही शासन मे,
या आग सुलगती रही प्रजा के मन मे,
तामस बढता यदि गया ढकेल प्रभा को,
निबन्ध पन्थ यदि मिला नही प्रतिभा को,

रिपु नही, यही अन्याय हमे मारेगा,
अपने घर मे ही फिर स्वदेश हारेगा।

खण्ड तीन

किरिचो पर कोई नया स्वप्न ढोते हो?
किस नयी फसल के बीज वीर! बोते हो?

दुर्दान्त दस्यु को सेल हूलते हैं हम,
यम की दष्ट्रा से खेल झूलते है हम।
वैसे तो कोई बात नही कहने को,
हम टूट रहे केवल स्वतत्र रहने को।

सामने देशमाता का भव्य चरण है,
जिह्वा पर जलता हुआ एक, बस प्रण है,
काटेंगे अरि का मुण्ड कि स्वय कटेंगे,
पीछे, परन्तु, सीमा से नही हटेंगे।

फूटेगी खर निझरी तप्त कुण्डो से,
भर जायेगा नगराज रुण्ड-मुण्डो से।
मागेगी जा रणचण्डी भेट, चढेंगी,
लाशो पर चढ कर आगे फाज बढेंगी।

पहली आहुति है अभी, यज्ञ चलने दो,
दो हवा, देश की आग जरा जलने दो।
जब हृदय-हृदय पावक से भर जायेगा,
भारत का पूरा पाप उतर जायेगा,

देखोगे, कैसा प्रलय चण्ड होता है।
असिवन्त हिन्द कितना प्रचण्ड होता है।

बाहो से हम अम्बुधि अगाध थाहेंगे,
धँस जायेगी यह धरा, अगर चाहेंगे।
तूफान हमारे इगित पर ठहरेंगे,
हम जहाँ कहेंगे, मेघ वही घहरेंगे।

जो असुर हमे सुर समझ आज हँसते है,
वचक शृगाल भूकते, साँप डँसते है,
कल यही कृपा के लिए हाथ जोडेंगे,
भकुटी विलोक दुष्टता-द्वन्द्व छोडेंगे।

गरजो, अम्बर को भरो रणोच्चारो से,
क्रोधान्ध रोर, हाँको स, हुकारो से।
यह आग मात्र सीमा की नही लपट है,
मूढो ! स्वतत्रता पर ही यह सकट है।

जातीय गव पर क्रूर प्रहार हुआ हे,
माँ के किरीट पर ही यह वार हुआ है।
अब जो सिर पर आ पडे, नहो डरना है,
जनमे है तो दो बार नही मरना है।

कुत्सित कलक का बोझ नही छोडेगे,
हम बिना लिये प्रतिशोध नही छोडेगे,
अरि का विरोध-अवरोध नही छोडेगे,
जब तक जीवित है, क्रोध नही छोडेगे।

गरजो हिमाद्रि के शिखर, तुग पाटो पर,
गुलमर्ग विन्ध्य, पच्चिमी, पूव घाटो पर,
भारत - समुद्र की लहर, ज्वार - भाटो पर,
गरजो, गरजो मीनार और लाटो पर।

खॅडहरो, भग्न कोटो मे, प्राचीरो मे,
जाह्नवी, नर्मदा, यमुना के तीरो मे,
कृष्णा - कछार मे कावेरी - कूलो मे,
चित्तौड - सिंहगढ के समीप धूलो मे—

सोये हैं जो रणबली, उन्हे टेरो रे।
नूतन पर अपनी शिखा प्रत्न फेरो रे।

झकझोरो, झकझोरो महान् सुप्तो को,
टेरो, टेरो चाणक्य-चन्द्रगुप्तो को,
विक्रमी तेज, असि की उद्दाम प्रभा को,
राणा प्रताप, गोविन्द, शिवा, सरजा को,

वैराग्यवीर, बन्दा फकीर भाई को,
टेरो, टेरो माता लक्ष्मीबाई को।

आजन्म सहा जिसने न व्यग्य थोडा था,
आजिज आ कर जिसने स्वदेश छोडा था,
हम हाय, आज तक जिसको गुहराते है,
नेताजी अब आते है, अब आते है',

साहसी, शूर-रस के उस मतवाले को,
टेरो, टेरो आजाद हिन्दवाले को।

खोजो, टीपू सुलतान कहाँ सोये है?
अशफाक और उसमान कहाँ सोये है?
बमवाले वीर जवान कहाँ सोये है?
वे भगतसिह बलवान कहाँ सोये है?

जा कहो, करे अब कृपा, नही रूठे वे,
बम उठा बाज के सदश व्यग्र टूटे वे।

हम मान गये जब क्रान्तिकाल होता हे,
सारी लपटो का रग लाल होता है।
जाग्रत पौरुष प्रज्वलित ज्वाल होता है,
शूरत्व नही कोमल, कराल होता है।

वास्तविक मम जीवन का जान गये हैं,
हम भलीभाति अघ को पहचान गये है।
हम समझ गये है खूब क्षम के छल को,
बम की महिमा को और विनय के बल को।

हम मान गये, वे वीर नही उद्धत थे,
वे सही, और हम विनयी बहुत गलत थे।
जा कहो, करे अब क्षमा, नही रूठे वे,
बम उठा बाज के सदृश व्यग्र टूटे वे।

साधना स्वय शोणित कर धार रही है,
सतलज को साबरमती पुकार रही है।

वे उठे, देश उनके पीछे हो लेगा,
हम कहते हैं, कोई न व्यग्य बोलेगा।
है कौन मूढ, जो पिटक आज खोलेगा?
बोलेगा जय वह भी, न खड्ग जो लेगा।

वे उठे, हाय, नाहक विलम्ब होता है,
अपनी भूलो के लिए देश रोता है।

जिसका सारा इतिहास तप्त, जगमग है,
वीरता-वह्नि से भरी हुई रग-रग है,
जिसके इतने बेटे रण झेल चुके है,
शूली, किरीच, शोलो से खेल चुके है,

उस वीर जाति को बन्दी कौन करेगा?
विकराल आग मुट्ठी मे कौन धरेगा?

केवल कृपाण को नही, त्याग-तप को भी,
टेरो, टरो साधना, यज्ञ, जप को भी।
गरजो, तरग से भरी आग भडकाओ,
हो जहाँ तपी, तप से तुम उन्हे जगाओ।

युग-युग से जो ऋद्धियाँ यहाँ उतरी है,
सिद्धिया धम की जो भी छिपी, धरी है,
उन सभी पावको से प्रचण्डतम रण दो,
शर और शाप, दोनो को आमन्त्रण दो।

चिन्तको ! चिन्तना की तलवार गढो रे !
ऋषियो ! कृशानु-उद्दीपन मन्त्र पढो रे !
योगियो ! जगो, जीवन की ओर बढो रे !
बन्दूको पर अपना आलोक मढो रे !

है जहाँ कही भी तेज, हमे पाना है,
रण मे समग्र भारत को ले जाना है।

पवतपति को आमूल डोलना होगा,
शकर को ध्वसक नयन खोलना होगा।
असि पर अशोक को मुण्ड तोलना होगा,
गौतम को जयजयकार बोलना होगा।

यह नही शान्ति की गुफा, युद्ध है, रण है,
तप नही, आज केवल तलवार शरण है।
ललकार रहा भारत को स्वय मरण है,
हम जीतेगे यह समर, हमारा प्रण है।

कुछ पता नही, हम कौन बीज बोते हैं,
है कौन स्वप्न, हम जिसे यहा ढोते है।

पर, हाँ, वसुधा दानी है, नही कृपण है,
देना मनुष्य जब भी उसको जल-कण है
यह दान वृथा वह कभी नही लेती है,
बदले मे कोई दूब हमे देती है।

पर, हमने तो सीचा है उसे लहू से,
चढती उमग की कलियो की खुशबू से।
क्या यह अपूव बलिदान पचा वह लेगी?
उद्दाम राष्ट्र क्या हमे नही वह देगी?

ना, यह अकाण्ड दुष्काण्ड नही होने का,
यह जगा देश अब और नही सोने का।
जब तक भीतर की गाँस नही कढती है,
श्री नही पुन भारत-मुख पर चढती है,

कैसे स्वदेश की रूह चैन पायेगी?
किस नर-नारी को भला नीद आयेगी?

कुछ सोच रहा है समय राह मे थम कर,
है ठहर गया सहसा इतिहास सहम कर।
सदियो मे शिव का अचल ध्यान डोला है,
तोपो के भीतर से भविष्य बोला है।

चोटे पडती यदि रही, शिला टूटेगी,
भारत मे कोई नयी धार फूटेगी।

हम खडे ध्वस मे जब भी कुछ गुनते है,
रथ के घघर का नाद कही सुनते है।
जिसकी आशा मे खडा व्यग्र जन-जन है,
यह उसी वीर का, स्यात् वज्र-स्यन्दन हे।

अम्बर मे जो अप्रतिम क्रोध छाया है,
पावक जो हिम को फोड निकल आया है,
वह किसी भाँति भी वृथा नही जायेगा,
आयेग।, अपना महा वीर आयेगा।

हाँ, वही, रूप प्रज्वलित विभासित नर का,
अशावतार सम्मिलित विष्णु-शकर का।
हाँ, वही, दुरित से जो न सन्धि करता है,
जो सन्त धम के लिए खड्ग धरता है।

हाँ, वही फूटता जो समष्टि के मन से,
सचित करता है तेज व्यग्र जन-जन से।
हाँ, वही, न्याय-वचित की जो आशा है,
निधनो, दीन-दलितो की अभिलाषा है।

विद्युत् बनकर जो चमक रहा चिन्तन मे,
गुजित जिसका निर्घोष लोक-गजन मे,
जो पतन-पुज पर पावक बरसाता है,
यह उसी वीर का रथ दौडा आता है।

गाओ कवियो ! जयगान, कल्पना तानो,
आ रहा देवता जो, उसको पहचानो।
हे एक हाथ मे परशु, एक मे कुश है,
आ रहा नये भारत का भाग्यपुरुष है।

अगार-हार अरपो, अर्चना करो रे!
आँखो की ज्वालाएँ मत देख डरो रे!
यह असुर भाव का शत्रु, पुण्य-त्राता है,
भयभीत मनुज के लिए अभय-दाता है।

यह वज्र वज्र के लिए, सुमो का सुम है,
यह और नही कोई, केवल हम-तुम है।
यह नही जाति का, न तो गोत्र-बन्धन का,
आ रहा मित्र भारत-भर के जन-जन का।

गाँधी-गौतम का त्याग लिये आता है,
शकर का शुद्ध विराग लिये आता है।
सच है, आखो मे आग लिये आता है,
पर, यह स्वदेश का भाग लिये आता है।

मत डरो, सन्त यह मुकुट नही माँगेगा,
धन के निमित्त यह धर्म नही त्यागेगा।
तुम सोओगे, तब भी यह ऋषि जागेगा,
ठन गया युद्ध तो बम-गोले दागेगा।

जब किसी जाति का अह चोट खाता है,
पावक प्रचण्ड हो कर बाहर आता है।
यह वही चोट खाये स्वदेश का बल है,
आहत भुजग है, सुलगा हुआ अनल है।

विक्रमी रूप नूतन अर्जुन-जेता का,
आ रहा स्वय यह परशुराम त्रेता का।
यह उत्तेजित, साकार, क्रुद्ध भारत है,
यह और नही कोई, विशुद्ध भारत है।

पापो पर बनकर प्रलय-वाण छूटेगा,
यह क्लीव ग्रम पर बाज-सदश टूटेगा।
जो कूट खड्ग से हे, उनसे रूठेगा,
कृत्रिम विभाकरो का प्रकाश लूटेगा।

वह गरुड देश का नाग-पाश काटेगा,
अरि-मुण्डो से खाइयॉ-खोह पाटेगा।
विद्युतित जीभ से चाट भीति हर लेगा,
वह तुम्हे आप अपने समान कर लेगा।

रह जायगा वह नही ज्ञान सिखला कर,
दूरस्थ गगन मे इन्द्रधनुष दिखला कर।
वह लक्ष्यविन्दु तक तुम को ले जायेगा,
उॅगलिया थाम मजिल तक पहुँचायेगा।

हर धडकन पर वह सजल मेघ सिहरेगा,
गत और अनागत बीच व्यग्र बिहरेगा।
बरसेगा बन जलधार तृषित प्राणो पर
बन तडिद्धार छटेगा चट्टानो पर।

जब वह आयेगा, द्विधा द्वन्द्व विनसेगा,
आलिगन मे अवनी को व्योम कसेगा।
विज्ञान धम के धड से भिन्न न होगा,
भवितव्य भूत-गौरव से छिन्न न होगा।

जव वह आयेगा खल कुबुद्धि छोडेगे,
सब सॉप आप ही फण अ०ने तोडेगे
विषवाह-अभ्र गॉधी पर न ी घिरेगे,
शान्ति के नीड मे गोले नही गिरेगे।

KEAMS

(१)

सिखलायेगा वह, ऋत एक ही अनल है
जिन्दगी नही वह जहाँ नही हलचल है।
जिनमे दाहकता नही, न तो गजन है,
सुख की तरग का जहाँ अन्ध वजन हे,
जो सत्य राख मे सने रुक्ष, रूठे है,
छोडो उनको, वे सही नही, झूठे है।

(२)

वैराग्य छोड बाँहो की विभा सँभालो
चट्टानो की छाती से दूध निकालो।
है रुकी जहाँ भी धार शिलाएँ तोडो,
पीयूष चन्द्रमाओ को पकड निचोडो।
चढ तुग शैल-शिखरो पर सोम पियो रे।
योगियो नही, विजयी के सदृश जियो रे!

(३)

मत टिको मदिर मधुमयी, शान्त छाया मे
भूलो मत उज्ज्वल ध्येय मोह - माया मे।
लौलुप्य - लालसा जहाँ वही पर क्षय है,
आनन्द नही, जीवन का लक्ष्य विजय हे।
जृम्भक, रहस्य-धूमिल मत ऋचा रचो रे!
सर्पित प्रसून के मद से बचो, बचो रे!

(४)

जब कुपित काल वीरता त्याग जलता है,
चिनगी बन फूलो का पराग जलता है,
सौन्दय-बोध बन नयी आग जलता है,
ऊँचा उठ कर कामार्त्त राग जलता है।
अम्बर पर अपनी विभा प्रबुद्ध करो रे!
गरजे कृशानु, तब कचन शुद्ध करो रे!

(५)

भामा ह्लादिनी-तरग, तडिन्माला है,
वह नही काम की लता, वीर बाला है,
आधी हालाहल-धार, अध हाला है।
जब भी उठती हुकार युद्ध-ज्वाला है,
चण्डिका कान्त को मुण्ड-माल देती है,
रथ के चक्के मे भुजा डाल देती है।

(६)

खोजता पुरुष सौन्दय, त्रिया प्रतिभा को,
नारी चरित्र-बल को, नर मात्र त्वचा को।
श्री नही पाणि जिसके सिर पर धरती है,
भामिनी हृदय से उसे नही वरती है।
पाओ रमणी का हृदय विजय अपना कर
या वसो वहाँ बन कसक वीर-गति पा कर।

(७)

जिसकी बाहे बलमयी, ललाट अरुण है,
भामिनी वही तरुणी, नर वही तरुण है।
है वही प्रेम जिसकी तरग उच्छल है,
वारुणी-धार मे मिश्रित जहाँ गरल है।
उद्दाम प्रीति बलिदान-बीज बोती है,
तलवार प्रेम से और तेज होती है।

(८)

पी जिसे उमडता अनल भुजा भरती है,
वह शक्ति सूय की किरणो मे झरती हे।
मरु के प्रदाह मे छिपा हुआ जो रस है,
तूफान-अन्धडो मे जो अमृत-कलस है,
उस तपन-तत्त्व से हृदय-प्राण सीचो रे!
खीचो, भीतर आँधियाँ और खीचो रे!

(९)

छोडो मत अपनी आन, सीस कट जाये
मत झुको अनय पर, भले व्योम फट जाये।
दो बार नही यमराज कण्ठ धरता है
मरता है जो एक ही बार मरता है।
तुम स्वय मरण के मुख पर चरण धरो रे!
जीना हो तो मरने से नही डरो रे!

(१०)

स्वातन्त्र्य जाति की लगन, व्यक्ति की धुन है,
बाहरी वस्तु यह नही, भीतरी गुण है।
नत हुए बिना जो अशनि-घात सहती है,
स्वाधीन जगत् मे वही जाति रहती है।
वीरत्व छोड पर का मत चरण गहो रे!
जो पडे आन, खुद ही सब आग सहो रे!

(११)

दासत्व जहाँ है, वही स्तब्ध जीवन है,
स्वातन्त्र्य निरन्तर समर, सनातन रण है।
स्वातन्त्र्य समस्या नही आज या कल की,
जागर्त्ति तीव्र वह घडी-घडी, पल-पल की।
पहरे पर चारो ओर सतक लगो रे!
धर धनुष-बाण उद्यत दिन-रात जगो रे!

(१२)

आँखियाँ नही जिसमे उमग भरती है,
छातिया जहा सगीनो से डरती है
शोणित के बदले जहा अश्रु वहता है,
वह देश कभी स्वाधीन नही रहता है।
पकडो अयाल, अन्वड पर उछल चढो रे!
किरिचो पर अपने तन का चाम मढो रे!

(१३)

जब कभी अह पर नियति चोट देती हे,
कुछ चीज अह से बडी जन्म लेती है।
नर पर जब भी भीषण विपत्ति आती है,
वह उसे और दुधष बना जाती है।
चोटे खा कर बिफरो, कुछ अधिक तनो रे!
धधको, स्फुलिग-से, बढ अगार बनो रे!

(१४)

धन धाम, ज्ञान - विज्ञान मात्र सम्वल है
बस एक मात्र बलिदान जाति का बल है।
सिर देने मे जो लोग नही डरते ह,
वे ही प्रभजनो पर शासन करते है।
जब पडे विपद, अपनी उमग जाँचो रे!
विकराल काल के फण पर चढ नाचो रे!

(१५)

है खडे हिस्र वक-व्याघ्र, खडा पशुबल है,
ऊँची मनुष्यता का पथ नही सरल है।
ये हिस्र साधु पर भी न तरस खाते है,
कण्ठी - माला के सहित चबा जाते है।
जो वीर काट कर इन्हे पार जायेगा,
उत्तुग शृग पर वही पहुँच पायेगा।

(१६)

जो पुरुष भूल शायक, कुठार को असि को,
पूजता मात्र चिन्तन, विचार को, मसि को,
सत्य का नही बहुमान किया करता हे,
केवल सपनो का ध्यान किया करता है,
बस मे उसके यह लोक न रह जायेगा।
है हवा स्वप्न, कर मे वह क्यो आयेगा?

(१७)

उपशम को ही जो जाति धर्म कहती है,
शम, दम विराग को श्रेष्ठ कम कहती हे,
धृति को प्रहार, क्षान्ति को वम कहती है,
अक्रोध, विनय को विजय-मम कहती है,
अपमान कौन, वह जिसको नही सहेगी?
सब को असीस सब का बन दास रहेगी।

(१८)

यह कठिन शाप सुकुमार धम-साधन का,
रण-विमुख, शान्त जीवन के आराधन का,
जातियाँ पावको से बच कर चलती है,
निर्वीर्य कल्पनाएँ रच कर चलती है।
वृन्तो पर जलते सूर्य छोड देती है,
चुन-चुन कर केवल चाँद तोड लेती है।

(१९)

दो उन्हे राम, तो मात्र नाम वे लेगी,
विक्रमी शरासन से न काम वे लेगी,
नवनीत बना देती भट अवतारी को,
मोहन मुरलीधर पाचजन्य-धारी को।
पावक को बुझा तुषार बना देती है,
गाँधी को शीतल क्षार बना देती हैं।

(२०)

है सही वना पहले पृथ्वी से जल था,
पर, बहुत पूर्व उससे बन चुका अनल था।
जब प्रथम-प्रथम हो उठा तत्त्व चचल था,
प्रेरणा-स्रोत पर विनय नही थी, बल था।
है अनल ब्रह्म, पावक-तरग जीवन है,
अब समझा, क्यो ज्वाला अभग जीवन है?

(२१)

भव को न अग्नि करने को क्षार बनी थी,
रखने को, बस उज्ज्वल आचार बनी थी।
शिव नही, शक्ति सजन-आधार बनी थी,
जब बनी सृष्टि, पहले तलवार बनी थी।
वह कालकण्ठ स्रज नही, न कुकुम-रज है।
सत्य ही कहा गुरु ने, अकाल असि-ध्वज है।

(२२)

स्वर मे पावक यदि नही वथा वन्दन है,
वीरता नही, तो सभी विनय क्रन्दन है।
सिर पर जिसके असिघात, रक्त-चन्दन है,
भ्रामरी उसी का करती अभिनन्दन है।
दानवी रक्त से सभी पाप धुलते है,
ऊँची मनुष्यता के पथ भी खुलते है।

(२३)

सत्य है, धर्म का परम रूप यव-कुश है,
अत्यय-अधम पर परशु मात्र अकुश है,
पर, जब कुठार की धार क्षीण होती है,
स्वयमेव दर्भ की श्री मलीन होती है।
हो धम ध्येय, तो भजो प्रथम बाँहो को।
तोलो अपना बल-वीय, नही आहो को।

(२४)

है दुखी मेष, क्यो लहू शेर चखते ह,
नाहक इतने क्यो दाँत तेज रखते है।
पर, शेर द्रवित हो दशन तोड क्यो लेगे ?
मेषो के हित व्याघ्रता छोड क्यो देगे ?
एक ही पन्थ, तुम भी आघात हनो रे !
मेषत्व छोड मेषो ! तुम व्याघ्र बनो रे !

(२५)

जो अडे, शेर उस नर से डर जाता हे
है विदित, व्याघ्र को व्याघ्र नही खाता है।
सच पूछो तो अब भी सच यही वचन है,
सभ्यता क्षीण, बलवान हिस्र कानन है।
एक ही पन्थ अब भी जग मे जीने का,
अभ्यास करो छागियो ! रक्त पीने का।

(२६)

जब शान्तिवादियो ने कपोत छोडे थे,
किसने आशा से नही हाथ जोडे थे ?
पर, हाय, वम यह भी धोखा है, छल है,
उजले कबूतरो मे भी छिपा अनल है।
पजो मे इनके धार वरी होती है,
कइयो मे तो बारूद भरी होती है।

(२७)

जो पुण्य-पुण्य बक रहे, उन्हे बकने दो,
जैसे सदियाँ थक चुकी, उन्हे थकने दो।
पर, देख चुके हम तो सब पुण्य कमा कर,
सौभाग्य, मान, गौरव, अभिमान गँवा कर।
वे पिये शीत, तुम आतप-घाम पियो रे !
वे जपे नाम, तुम बन कर राम जियो रे !

(२८)

है जिन्हे दाँत, उनसे अदन्त कहते है,
यानी शूरो को देख सन्त कहते हैं,
"तुम तुडा दात क्यो नही पुण्य पाते हो ?
यानी तुम भी क्यो भेट न बन जाते हो ?"
पर कौन शेर भेडो की बात सुनेगा
जिन्दगी छोड मरने की राह चुनेगा ?

(२९)

सुर नही शान्ति आँसू बिखेर लायेगे,
मग नही युद्ध का शमन शर लायेगे।
विनयी न विनय को लगा टेर लायेगे
लायेगे तो वह दिन दिलेर लायेगे।
बोलती बन्द होगी पशु की जब भय से,
उतरेगी भू पर शान्ति छूट सशय से।

(३०)

वे देश शान्ति के सब से शत्रु प्रबल है,
जो बहुत बडे होने पर भी दुर्बल है,
है जिनके उदर विशाल, बाह छोटी है,
भोथरे दाँत पर, जीभ बहुत मोटी है।
औरो के पाले जो अलज्ज पलते है,
अथवा शेरो पर लदे हुए चलते हैं।

(३१)

सिहो पर अपना अतुल भार मत डालो,
हाथियो ! स्वय अपना तुम बोझ सँभालो।
यदि लदे फिरे, यो ही, तो पछताओगे,
शव मात्र आप अपना तुम रह जाओगे।
यह नही मात्र अपकीर्त्ति, अनय की अति है।
जाने, कैसे सहती यह दृश्य प्रकृति है !

(३२)

उद्देश्य जन्म का नही कीर्त्ति या धन है,
सुख नही, धर्म भी नही, न तो दर्शन है,
विज्ञान, ज्ञान-बल नही, न तो चिन्तन है,
जीवन का अन्तिम ध्येय स्वय जीवन है।
सब से स्वतन्त्र यह रस जो जनघ पियेगा,
पूरा जीवन केवल वह वीर जियेगा।

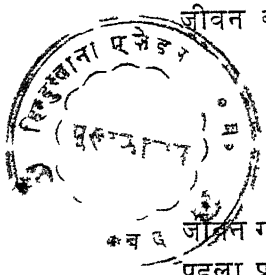

(३३)

जीवन गति है, वह नित अरुद्ध चलता है,
पहला प्रमाण पावक का, वह जलता है।
सिखला निरोध-निर्ज्वलन धर्म छलता है,
जीवन तरग-गजन है, चचलता है।
धधको अभग पल-विपल अरुद्ध जलो रे!
धारा रोके यदि राह, विरुद्ध चलो रे!

(३४)

जीवन अपनी ज्वाला से आप ज्वलित है,
अपनी तरग से आप समुद्वेलित है।
तुम वृथा ज्योति के लिए कहाँ जाओगे?
है जहाँ आग, आलोक वही पाओगे।
वर्ण हुआ, पत्र यदि मृदुल, सुरम्य कली है?
सब मषा, तना तरु का यदि नही बली है।

(३५)

धन से मनुष्य का पाप उभर आता है,
निर्धन जीवन यदि हुआ, बिखर जाता है।
कहते है जिसको सुयश-कीर्त्ति, सो क्या है?
कानो की यदि गुदगुदी नही, तो क्या है?
यश-अयश-चिन्तना भूल स्थान पकडो रे!
यश नही, मात्र जीवन के लिए लडो रे!

(३६)

कुछ समझ नही पडता, रहस्य यह क्या है !
जाने, भारत मे बहती कौन हवा है !
गमलो मे है जो खडे, सुरम्य सुदल है,
मिट्टी पर के ही पेड दीन-दुबल है।
जब तक है यह वैषम्य समाज सडेगा,
किस तरह एक हो कर यह देश लडेगा।

(३७)

सब से पहले यह दुरित-मूल काटो रे !
समतल पीटो, खाइयाँ-खड्ड पाटो रे !
बहुपाद वटो की शिरा-सोर छाँटो रे !
जो मिले अमत, सब को समान बाटो रे !
वैषम्य घोर जब तक यह शेष रहेगा,
दुबल का ही दुबल यह देश रहेगा।

(३८)

यह बडे भाग्य की बात ! सिन्धु चचल है,
मथ रहा आज फिर उसे मन्दराचल है।
छोडता व्यग्र फूत्कार सप पल-पल है,
गर्जित तरग, प्रज्वलित वाडवानल है।
लो कढा जहर ! ससार जला जाता है।
ठहरो, ठहरो, पीयूष अभी आता है।

(३९)

पर, सावधान ! जा कहो उन्हे समझा कर,
सुर पुन भाग जाये मत सुधा चुरा कर।
जो कढा अमृत, सम-अश बाँट हम लेगे,
इस बार जहर का भाग उन्हे भी देगे।
वैषम्य शेष यदि रहा, क्षान्ति डोलेगी,
इस रण पर चढ कर महा क्रान्ति बोलेगी।

(४०)

झझा-झकोर पर चढो, मस्त झूलो रे !
वृन्तो पर बन पावक-प्रसून फूलो रे !
दाये-बाये का द्वन्द्व आज भूलो रे !
सामने पडे जो शत्रु, शूल हूलो रे !
वृक हो कि व्याल, जो भी विरुद्ध आयेगा,
भारत से जीवित लौट नही पायेगा।

(४१)

निजर पिनाक हर का टकार उठा है,
हिमवन्त हाथ मे ले अगार उठा है,
ताण्डवी तेज फिर से हुकार उठा है,
लोहित मे था जो गिरा, कुठार उठा है।
ससार धम की नयी आग देखेगा,
मानव का करतब पुन नाग देखेगा।

(४२)

माँगो, माँगो वरदान धाम चारो से,
मन्दिरो, मस्जिदो, गिरजो, गुरुद्वारो से।
जय कहो वीर विक्रम की, शिवा बली की,
उस धमखड्ग, ईश्वर के सिह, अली की।
जब मिले काल, 'जय महाकाल !' बोलो रे !
सत् श्री अकाल ! सत् श्री अकाल ! बोलो रे !

७-१-६३]

जवानियाँ

नये सुरो मे शिंजिनी बजा रही जवानिया,
लहू मे तैर-तैर के नहा रही जवानिया।

(१)

प्रभात-शृग से घडे सुवण के उँडेलती,
रँगी हुई घटा मे भानु को उछाल खेलती,
तुषार-जाल मे सहस्र हेम-दीप बालती,
समुद्र की तरग मे हिरण्य-धूलि डालती,
सुनील चीर को सुवण-बीच बोरती हुई,
धरा के ताल-ताल मे उसे निचोडती हुई,
उषा के हाथ की विभा लुटा रही जवानियाँ।

(२)

घनो के पार बैठ तार बीन के चढा रही,
सुमन्द्र नाद मे मलार विश्व को सुना रही,
अभी कढी लटे निचोडती, जमीन सीचती,
अभी बढी घटा मे क्रुद्ध काल-खड्ग खीचती,
पडी व' टूट देख लो, अजस्र वारिधार मे,
चली व' बाढ बन, नही रुमा सकी कगार मे।
रुकावटो को तोड-फोड छा रही जवानियाँ।

(३)

हटो तमीचरो, कि हो चुकी समाप्त रात है
कुहेलिका के पार जगमगा रहा प्रभात है।
लपेट मे समेटता रुकावटो को ताड के,
प्रकाश का प्रवाह आ रहा दिगन्त फोड के।
विशीर्ण डालियाँ महीरुहो की टूटने लगी,
शमा की झालरे व' टक्करो से फूटने लगी।
चढी हुई प्रभजनो पे आ रही जवानियाँ।

(४)

घटा को फाड व्योम बीच गूँजती दहाड है,
जमीन डोलती है और डोलता पहाड है,
भुजग दिग्गजो से, कूमराज त्रस्त कोल से,
धरा उछल-उछल के बात पूछती खगोल से,
कि क्या हुआ है सृष्टि को? न एक अग शान्त है,
प्रकोप रुद्र का कि कल्पनाश है युगान्त है?
जवानियो की धूम-सी मचा रही जवानियाँ।

(५)

समस्त सूय-लोक एक हाथ मे लिये हुए
दबा के एक पाँव चन्द्र-भाल पे दिये हुए
खगोल मे धुआँ बिखेरती प्रतप्त श्वास से,
भविष्य को पुकारती हुई प्रचण्ड हास से,
उछाल देव-लोक को मही से तोलती हुई
मनुष्य के प्रताप का रहस्य खोलती हुई,
विराट रूप विश्व को दिखा रही जवानियाँ।

(६)

मही प्रदीप्त है, दिशा-दिगन्त लाल-लाल है,
व' देख लो जवानियो की जल रही मशाल है,
व' गिर रहे है आग मे पहाड टूट-टूट के,
व' आसमाँ से आ रहे है रत्न छूट-छूट के,
उठो, उठो कुरीतियो की राह तुम भी रोक दो,
बढो, बढो, कि आग मे अनीतियो को झोक दो।
परम्परा की होलिका जला रही जवानियाँ।

(७)

व' देख लो, खडी है कौन तोप के निशान पर,
व' देख लो, अडी है कौन जिन्दगी की आनपर।
व' कौन थी, जो कूद के अभी गिरी है आग मे?
लहू बहा कि तेल आ गिरा नया चिराग मे?
अहा व' अश्रु था कि प्रेम का दबा उफान था?
हँसी थी या कि चित्र मे सजीव, मौन गान था?
अभव्य भेट काल को चढा रही जवानियाँ।

(८)

अहा, कि एक रात चाँदनी-भरी सुहावनी,
अहा, कि एक बात प्रेम की बडी लुभावनी,
अहा, कि एक याद दूब-सी मरुप्रदेश मे,
अहा कि एक चाद जो छिपा कराल वेश मे,
अहा, पुकार कर्म की, अहा री पीर मम की,
अहा, कि प्रीति भेट जा चढी कठोर धर्म की।
अहा, कि आसुओ मे मुस्करा रही जवानियाँ।

१९४५ ई०]

हिम्मत की रौशनी

उसे भी देख, जो भीतर भरा अङ्गार है साथी !

(१)

सियाही देखता है, देखता है तू अँधेरे को
किरण को घेर कर छाये हुए विकराल घेरे को।
उसे भी देख, जो इस बाहरी तम को बहा सकती
दबी तेरे लहू मे रौशनी की धार हे साथी !

(२)

पडी थी नीव तेरी चाँद-सूरज के उजाले पर,
तपस्या पर, लहू पर, आग पर, तलवार-भाले पर।
डरे तू ना-उमेदी से, कभी यह हो नही सकत।
कि तुझ मे ज्योति का अक्षय भरा भण्डार है साथी !

(३)

बवण्डर चीखता लौटा फिरा तूफान जाता है,
डराने के लिए तुझको नया भूडोल आता है,
नया मैदान है राही, गरजना है नये बल से,
उठा, इस बार वह जो आखिरी हुकार है साथी !

(४)

विनय की रागिनी मे बीन के ये तार बजते है,
रुदन बजना, सजग हो क्षोभ-हाहाकार बजते हैं।
बजा इस बार दीपक-राग कोई आखिरी सुर मे,
छिपा इस बीन मे ही आगवाला तार है साथी!

(५)

गरजते शेर आये, सामने फिर भेडिये आये,
नखो को तेज, दातो को बहुत तीखा किये आये।
मगर, परवाह क्या? हो जा खडा तू तानकर उसको,
छिपी जो हड्डियो मे आग-सी तलवार है साथी!

(६)

शिखर पर तू, न तेरी राह बाकी दाहिने-बाये,
खडी आगे दरी यह मौत-सी विकराल मुँह बाये।
कदम पीछे हटाया तो अभी ईमान जाता है,
उछल जा, कूद जा, पल मे दरी यह पार है साथी!

(७)

न रुकना है तुझे झण्डा उडा केवल पहाडो पर,
विजय पानी है तुझको चाँद-सूरज पर, सितारो पर।
वधू रहती जहा नरवीर की, तलवारवालो की,
जमी वह इस ज़रा-से आसमा के पार है साथी!

(८)

भुजाओ पर मही का भार फूलो-सा उठाये जा,
कँपाये जा गगन को, इन्द्र का आसन हिलाये जा।
जहा मे एक ही है रौशनी, वह नाम की तेरे
जमी को एक तेरी आग का आधार है साथी।

१९४६ ई०]

लोहे के मर्द

पुरुष वीर बलवान,
देश की शान,
हमारे नौजवान
घायल होकर आये है।

कहते है, ये पुष्प, दीप,
अक्षत क्यो लाये हो ?

हमे कामना नही सुयश-विस्तार की,
फूलो के हारो की, जय-जयकार की।

तडप रही घायल स्वदेश की शान है।
सीमा पर सकट मे हिन्दुस्तान है।

ले जाओ आरती पुष्प पल्लव हरे
ले जाओ ये थाल मोदको से भरे।

तिलक चढा मत और हृदय मे हक दो,
दे सकते हो तो गोली-बन्दूक दो।

१ ११ ६२ ई०]

जनता जगी हुई है

जनता जगी हुई है।
क्रुद्ध सिंहिनी कुछ इस चिन्ता से भी ठगी हुई है।
कहाँ गये वे, जो पानी मे आग लगाते थे?
बजा-बजा दुन्दुभी रात-दिन हमे जगाते थे?
धरती पर है कौन? कौन है सपनो के डेरो मे?
कौन मुक्त? है घिरा कौन प्रस्तावो के घेरो मे?
सोच न कर चण्डिके! भ्रमित है जो, वे भी आयेगे।
तेरी छाया छोड अभागे शरण कहाँ पायेगे?

जनता जगी हुई है।
भरत-भूमि मे किसी पुण्य-पावक ने किया प्रवेश।
धधक उठा है एक दीप की लौ-सा सारा देश।
खौल रही नदियाँ, मेघो मे शम्पा लहक रही है।
फट पडने को विकल शैल की छाती दहक रही है।
गजन, गूज, तरग, रोष, निर्घोष हाक, हुकार!
जाने, होगा शमित आज क्या खाकर पारावार!

जनता जगी हुई है।
ओ गाधी के शान्ति सदन मे आग लगानेवाले!
कपटी कुटिल, कृतघ्न आसुरी महिमा के मतवाले?
वैसे तो मन मार शील से हम विनम्र जीते है,
आततायियो का शोणित, लेकिन, हम भी पीते हैं।
मुख मे वेद पीठ पर तरकस कर मे कठिन कुठार,
सावधान! ले रहा परशुधर फिर नवीन अवतार।

जनता जगी हुई हे।
मूद-मूद वे पृष्ठ शील का गुण जो सिखलाते है,
वज्रायुध को पाप, लौह को दुर्गुण बतलाते है।
मन की व्यथा समेट न तो अपनेपन से हारेगा।
मर जायेगा स्वय, सप को अगर नही मारेगा।
पवत पर से उतर रहा है महा भयानक व्याल।
मधुसूदन को टेर नही यह सुगत बुद्ध का काल।

जनता जगी हुई है।
नाचे रणचण्डिका कि उतरे प्रलय हिमालय पर से
फटे अतल पाताल कि झर-झर झरे मृत्यु अम्बर से,
झेल कलेजे पर, किस्मत की जो भी नाराजी है
खेल मरण का खेल मुक्ति की यह पहली बाजी है।
सिर पर उठा वज्र, आखो पर ले हरि का अभिशाप।
अग्नि-स्नान के बिना धुलेगा नही राष्ट्र का पाप।

३-११ ६२ ई०]

आज कसौटी पर गाँधी की आग है

(१)

अब भी पशु मत बनो
कहा है वीर जवाहरलाल ने।

अन्धकार की दबी रौशनी की धीमी ललकार,
कठिन घडी मे भी भारत के मन की धीर पुकार।
सुनती हो नागिनी! समझती हो इस स्वर को?
देखा है क्या कही और भू पर उस नर को—
जिसे न चढता जहर,
न तो उन्माद कभी आता है,
समर-भूमि मे भी जो
पशु होने से घबराता है?

(२)

अब भी पशु मत बनो,
कहा है वीर जवाहरलाल ने।

ऊँचाई की बात, किन्तु, कुछ चिन्ता भी है।
क्या मनुष्य मानव होकर लडने जाता है?

क्रूर दानवो के दुर्दान्त समूह ने
वो हिंस्र पशुओ बाघो के व्यूह ने—
घेर लिया है जिसे अगर वह नर पशुओ पर,
तुलसी की कण्ठी छू-छू, रो-रो कर वार करेगा,
पशु की होगी विजय पराजय मानवता की
और, अन्त मे द्विधाग्रस्त मानव भी स्वय मरेगा।

(३)

अब भी पशु मत बनो,
कहा है वीर जवाहरलाल ने।

पर यह सुधा तरग कौन पीने देता है?
विना हुए पशु आज कौन जीने देता है?

शुरू हो गया भैंस-भैंस का खेल,
जानवर तू भी बन ले,
पशु की तरह डकार,
यही वन की भाषा है।
सिर पर तीखे सीग बाँध,
बघनखे पहन ले।

सकुच रहा? क्या बबरता का खेल
नही खुल कर खेलेगा?
तोडेगा सिर नही विकट,
विषधर भुजग का?

भैंसो की हुरपेट
पीठ पर ही झेलेगा?

तो कहता हूँ सुन रहस्य की बात,
खड्ग सीचा जाता है—
नही युद्ध मे गगा के
जल की फुहार से।
अजब बात तू लडे
आततायी असुरो से
निममता से नही
दया, ममता, दुलार से।

दबा पुण्य का वेग,
अँखडियाँ गीली मत होने दे,
कस कर पकड कृपाण
मुट्ठियाँ ढीली मत होने दे।

जहाँ शस्त्रबल नही,
शास्त्र पछताते या रोते है।
ऋषियो को भी सिद्धि
तभी तप से मिलती है,
जब पहरे पर स्वय
धनुधर राम खडे होते है।

पापी कोई और, चित्त क्यो म्लान करे हम?
भारत मे जो निधि मनुष्यता की सचित है,
क्यो पशुत्व-भय से उसका वलिदान करे हम?

किसे लीलने को आयी यह लाल लपट है?
गाँधी पर यदि नही और किस पर सकट है?

सकुच गये यदि हम अहिंस्र
हिंसा के हाहाकार से,
कौन बचा पायेगा
गांधी को पशुओ की मार से?

समय पूछता है, ज्वाला है कहाँ अभय की?
कहाँ सत्य का वज्र, लौहमय रीढ विनय की?

कहाँ सिन्धु का अनल,
अधर पर जिसके इतना झाग है?
आज अहिंसा नही,
कसौटी पर गाँधी की आग है।

११ ११ ६२ ई०]

जौहर

जगता तभी जहान
उसे जब विपद जगाती है।

हँसी भूल बच्चे चिन्तन करने लगते है।
बहने जाती डूब किसी गम्भीर ध्यान मे।
कुसुम खोजने लगते अपनी आग,
ऊँघती नदी तेज होकर हहराती है।

पेड खडे कर कान प्रलय की चरण-चाप सुनते है
हवा आँकने को भविष्य की आहट रुक जाती है,
आर-पार अम्बर के जब शम्पा चिल्लाती है।

भारत मे जब कभी कडकता वज्र,
सती भामिनियाँ सहसा हो उठती निमम, कठोर।
दाँतो से अधर दबा,
आँखो का अश्रु रोक,
वलि-बेला की आरती, पुष्प रोली सहेज,
पुरुषो को रण मे भेज
चडिकाएँ सगव
सिन्दूर लेप घर-घर उमग शिखा सजाती है।

विजयी अगर स्वदेश,
प्रिया - प्रियतम का फिर नाता है।
विजयी अगर स्वदेश,
पुरुष फिर पुत्र, त्रिया माता है।

किन्तु, पताका झुकी अगर बलिदान की,
गरदन उँची रही न हिन्दुस्तान की,
पुरुष पीठ पर लिये घाव रोते रहे,
आसू से अपना कलक धोते रहे।

पर जातीय कलक
देश की माताएँ सहती नही,
परम्परा है, चीख-चीख
वे पीडाएँ कहती नही।

हारे नर को देख
देविया दबी ग्लानि के भार से
जल उठती है, अगर
काट सकती न कण्ठ तलवार से।

७ ११ ६२ ई०]

आपद्धर्म

अरे उर्वशीकार !
कविता की गरदन पर धर कर पाव खडा हो।
हमे चाहिए गम गीत उन्माद प्रलय का,
अपनी ऊँचाई से तू कुछ और बडा हो।

कच्चा पानी ठीक नही,
ज्वर-ग्रसित देश है।
उबला हुआ समुष्ण सलिल है पथ्य,
वही परिशोधित जल दे।
जाडे की है रात, गीत की गरमाहट दे,
तप्त अनल दे।

रोज पत्र आते हैं, जलते गान लिखू मै,
जितना हूँ, उससे कुछ अधिक जवान दिखू मै।

और, सत्य ही, मैं भी युग के ज्वरावेग से चूर,
दूर उवशी-लोक से,
गयी जवानी की बुझती भट्ठी फिर सुलगाता हूँ।
जितनी ही फैलती देश मे भीति युद्ध की,
मै उतना ही कण्ठ फाड, कुछ और जोर से
चिल्लाता, चीखता, युद्ध के अन्ध गीत गाता हूँ।

किन्तु, हृदय से जब भी कोई आग उमड कर
चट्टानो की वज्र-मधुर रागिनी
कण्ठ-स्वर मे भरने आती है,
ताप और आलोक, जहा दोनो बसते आये थे,
वहाँ दहकते अगारे केवल वरने आती है,
तभी प्राण के किसी निभृत कोने से
कहता है कोई माना, विस्फोट नही यह व्यर्थ है,
किन्तु बुलाने को जिसको तू गरज रहा है,
उसे पास लाने मे केवल गजन नही समर्थ है।

रोष घोष, स्वर नही, मौन शूरता मनुज का धन है।
और शूरता नही मात्र अगार,
शूरता नही मात्र रण मे प्रकोप से धुधुआती तलवार,
शूरता स्वस्थ जाति का चिर-अनिद्र, जाग्रत स्वभाव,
शूरत्व मृत्यु के वरने का निर्भीक भाव,
शूरत्व त्याग, शूरता बुद्धि की प्रखर आग,
शूरत्व मनुज का द्विधा-मुक्त चिन्तन है।

विजय-केतु गाडते वीर जिस गगनजयी चोटी पर,
पहले वह मन की उमग के बीच चढी जाती है,
विद्युत् बन छूटती समर मे जो कृपाण लोहे की,
भट्ठी मे पीछे विचार मे प्रथम गढी जाती है।

आँख खोल कर देख, बडी से बडी सिद्धि का
कारण केवल एक अश तलवार है,
तीन अश उसका निमित्त सकल्प-शुद्धि है,
आशा है, साहस है, शुद्ध विचार है।

सोच, कहा है उस दुरन्त,
पापिनी बुद्धि का मूल, तुझे जो
बार-बार आकर अपनी छलना से छल जाती है?
बार-बार तू उदय-शृङ्ग पर चढ क्यो गिर जाता है?
बार-बार कर मे आकर क्यो सिद्धि निकल जाती है?

जो विराग को सकल सुकृत का मम समझनेवाले !
आत्मघात को उच्च धर्म के हित अर्पित बलिदान,
शत्रु के रक्त-पान को
मानवता का पतन, कलुष का कर्म समझनेवाले !

जो निरग्नि ! आ शान्त ! प्रज्ञ तरा गम्भीर गहन है।
रोष घोष, हुंकार गर्जनों से उद्धार न होगा।
भुजा नहीं बलहीन,
रक्त की आभा नहीं मलीन
अरे, ओ नर पवित्र ! प्राचीन !
दीन लेकिन, तेरा चिन्तन है।

विजय चाहता है, सचमुच,
तू अगर विषैले नाग पर,
तो कहता हूँ सुन
दिल मे जो आग लगी है,
उसे बुद्धि मे घोल
उठाकर ले जा उसे दिमाग पर।

तुझ से जो माँगते उबलते गीत अनल के
पूछ कि वे कूटस्थ आग लेकर क्या भला करेंगे ?
क्या प्रमाण है, यह सूखी बारूद नहीं सीलेगी ?
घर मे बिखरी हुई बर्फ वे कहाँ समेट धरेंगे ?

अच्छा है, वे लड़े नहीं, जिनके जीवन मे
विचिकित्सा जीवित है धर्म-अधर्म की।
अच्छा है, वे अड़े आन पर नहीं,
न खेले कभी जान पर,
चबा रही है जिन्हे युगो से
दुविधा कर्म - अकर्म की।

क्योकि युद्ध मे जीत कभी भी उसे नही मिलती हे,
प्रज्ञा जिसकी विकल,
द्विधा-कुण्ठित कृपाण की धार हे,
परम धर्म पर टिकने की सामर्थ्य नही है
और न आपद्धर्म जिसे स्वीकार हे।

तुझसे जो माँगते उबलते गीत अनल के,
पूछ, प्रेम की वे किंचित् सीमा स्वीकार करेंगे?
मानवीय मूल्यो की जब कुछ आहुतियाँ पडनी हो,
रोयेंगे तो नही? पाप से तो वे नही डरेंगे?

अगर कहे तू, युद्ध पुण्य, वर्मबाजी फुलझडिया है,
ये रोने की नही, मस्त, खुश होने की घडिया है,
दातो से तजनी दबा वे चुप तो नही रहेंगे?
तुझ को वे दानव या दीवाना तो नही कहेंगे?

तब भी श्येन-धर्म ही सच है, गलत युद्ध मे प्रिय है,
पूर्ण चेतना गलत, आज पागलपन स्वाभाविक है।

जूझ वीरता से, प्रचण्डता से, बलिष्ठ तन, मन से,
आँख मूद कर जूझ अन्ध निर्दयता, पागलपन से।

समर पाप साकार, समर क्रीडा है पागलपन की,
सभी द्विधाएँ व्यर्थ समर मे साध्य और साधन की।

एक वस्तु है ग्राह्य युद्ध मे,
और सभी कुछ देय है,
पुण्य हो कि हो पाप,
जीत केवल दोनो का ध्येय है।

सच है, छल की विजय, अन्त तक,
विजय नही, अभिशाप है।
किन्तु, भूल मत, और पाप जितने घातक हो,
समर हारने से बढकर घातक न दूसरा पाप है।

१०-१२ ६२ ई०]

पाद-टिप्पणी

(युद्ध काव्य की)

मेरी कविताएँ सुन कर खुश होने वाले!
तुझे ज्ञात हे, इन खुशियो का क्या रहस्य है?

मेरे सुख का राज? सभ्यता के भीतर से
उठती हे जो हूक, बुद्धि को विकलाती है।
कोई उत्तर नहीं। हार कर मै मन-मारा
चौराहे पर खडा जोर से चिल्लाता हूँ।

गजन धावा नही, स्वरो का घटाटोप है,
परित्राण का शिखर, पलायन उन प्रश्नो से
जिन का उत्तर नही, न कोई समाधान हे।

तेरे सुख का भेद? कही भीतर प्राणो मे
तुझ को भी काटते पाप, मन बहलाने को
तू मेरी वारुणी पान कर चिल्लाता है।

कौन पाप? है याद, उचक्के जब मचो से
गरज रहे थे, तू ने उन्हे प्रणाम किया था?
पहनाया था उसे हार, जिस के जीवन का
कचन हे आराध्य, त्याग सूती चप्पल है।

कौन पाप? है याद, भेंडिये जब टूटे थे
तेरे घर के पास दीन-दुबल भेडो पर,
पचा गया था क्रोध सोच कर तू यह मन मे
कौन विपद मे पडे वली से बैर बढा कर?

जब-जब उठा सवाल, सोचने से कतरा कर
पडा रहा काहिल तू इस बोदी आशा मे,
कौन करे चिन्तन? खरोच मन पर पडती है।
जब दस बीस जवाब दुकानो मे उतरेंगे,
हम भी लेगे उठा एक अपनी पसन्द का।

जब चुनाव आया, तेरी आवाज बन्द थी,
तू शरीफ था, बडा चतुर, नीरव तटस्थ था।
जब भी दो दल लडे, मच से खिसक गया तू,
बडी बुद्धि के साथ सोच, यह कलह व्यथ है।
मुझ को क्या? मैं गन्धमुक्त, सब से अलिप्त हूँ।

अब समझा, चुप्पी कदयता की वाणी है?
बहुत अधिक चातुय आपदाओ का घर हे।
दोषी केवल वही नही, जो नयनहीन था,
उस का भी है पाप, आँख थी जिसे, किन्तु, जो
बडी-बडी घडियो मे मौन, तटस्थ रहा है।

सीधा नही सवाल, युद्ध घनघोर प्रश्न है!
अधी समस्त समाज, बाँध मे छेद बहुत है।
जो सब से है अनघ, दोष कुछ उस का भी है।

कह सकता है, जो विपत्तियाँ अब आयी है,
तू ने उन का कभी नही आह्वान किया था
गलत हुक्म कर दर्ज सचिकाओ पर अथवा
गलत ढग से अपना घर-आँगन बुहार कर?

सरहद पर ही नही, मोरचे खुले हुए है
खेतो मे, खलिहान, बैठको, बाजारो मे!
जहा कही आलस्य, वही दुर्भाग्य देश का,
जो भी नही सतक, सभी के लिए विपद है।

और आज भी जिस पापी का सही नही ईमान,
(भले वह नेता हो, शासक हो या दूकानदार हो)
चीनी है, दुश्मन है, सब के लिए काल है!

कल जो किया गुनाह, आग बन कर आया है।
पर, जो हम कर रहे आज, उस का क्या होगा?
समझ नही नादान! पाप से छूट गये हम
सुन कर गजन-गीत या कि हुकार उठा कर।

अपनी रक्षा के निमित्त औरो को रण मे
कटवाना है पाप, पाप है यह विचार भी,
जगे युवक सीमा पर, हम सोने जाते है।

६ ११ ६२ ई०]

शान्तिवादी

पुत्र मृत्यु के लिए, पिता रोने को,
माँ धुनने को सीस, वत्स आसू पीने को,
लुटने को सिन्दूर,
उत्तराएँ विधवा होने को।

सरहद के उस पार हो कि इस पार हो,
युद्ध सोचता नही, कौन किसका द्रोहा है।
उसका केवल ध्येय, ध्वस हो मानवता का,
मनुज जहाँ भी हो, यम का आहार हो।

माताओ को शोक, युवतियो को विषाद है,
बेकसूर बच्चे अनाथ होकर रोते हैं।
शान्तिवादियो! यही तुम्हारा शान्तिवाद है?

अब मत लेना नाम शान्ति का,
जिह्वा जल जायेगी,
ले-देकर जो एक शब्द है बचा, उसे भी,
तुम बकते यदि रहे,
धरित्री समझ नही पायेगी।

शान्तिवाद का यह नवीन सारथी तुम्हारा
नही शान्ति का सखा,
हलाकू है, नीरो, नमरूद है।
और उड़ाये है इसने उज्ज्वल कपोत जो,
उनके भीतर भरी हुई बारूद है।

१० १२ १९६२ इ०]

KEAMS

अहिंसावादी का युद्ध-गीत

हाय, मै लिखू युद्ध के गीत!
बन्धु ! हो गयी बडी अनरीत!
कण्ठ उर अन्तर के विपरीत,
देशवासी ! जागो ! जागो !
गाँधी की रक्षा करने को गाँधी से भागो !

(२)

रुधिर मे रखे शीत या ताप?
अहिंसा वर है अथवा शाप?
युद्ध है पुण्य याकि दुष्पाप?
आज सारा विवाद त्यागो।
गाँधी की रक्षा करने को गाधी से भागो।

(३)

सँभाले कहाँ बुद्ध का दाय?
आज छूछे सब पिटक-निकाय।
कारगर कोई नही उपाय।
गिराओ बम, गोली दागो।
गाँधी की रक्षा करने को गाँधी से भागो।

११ ११-६२ ई०]

इतिहास का न्याय

दूर भविष्यत् के पट पर जो वाक्य लिखे हैं,
पढ लेना, भवितव्य अगर आगे जीवित रहने दे।

गाधी, बुद्ध, अशोक नाम है बडे दिव्य स्वप्नो के।
भारत स्वय मनुष्य-जाति की बहुत बडी कविता है।

कह लेना यह कथा, अगर अपनी विषाक्त डाढो से
काल छोड दे तुझे और भवितव्य अगर कहने दे।

दशन की लहरे मत अधिक उछाल,
विचारो के विवत मे पडा
आदमी बहुत विवश होता है।
मगरमच्छ नोचते देह का मास और वह
छदो मे सोचता, ऋचाओ-श्लोको मे रोता है।

दूर क्षितिज के सपने मे मत भूल,
देख उस महासत्य को,
जिसकी आग प्रचण्ड, दाह दारुण प्रत्यक्ष, विकट है।

गाँधी, बुद्ध, अशोक विचारो से अब नही बचेगे।
उठा खड्ग, यह और किसी पर नही,
स्वय गाँधी, गगा, गौतम पर ही सकट है।

पशुता के दुमद झकोर मे हाथ उठा कर
क्या करना आह्वान शील का, महिष्णुता का, स्नेह का ?
आत्मा की तलवार सवथा वहाँ व्यथ है,
जहाँ अखाडा खुला हुआ हो देह का।

द्विधा व्यथ, आगे का क्या इतिहास कहेगा।
द्विधा व्यथ, युग के चिन्तन का कहा ध्यान है।
दशन करता सदा मूक अनुसरण क्रिया का।
और जिसे हम कहते हे इतिहास,
बडा ही बुद्धिमान है।

उच्च मनुजता को ठुकराने से तो वह डरता है।
किन्तु, उच्च गुण के कारण जो रण मे हार गये है,
उन पराजितो की किस्मत पर रोता है इतिहास,
पर, अपाहिजो का कलक वह क्षमा नही करता है।

११-१२-६२ ई०]

एनार्की

(१)

"अरे, अरे, दिन-दहाडे ही जुल्म ढाता है!
रेलवे का स्लीपर उठाये कहाँ जाता है?"

"बडा बेवकूफ है, अजब तेरा हाल है,
तुझे क्या पडी है? य' तो सरकारी माल है।"

"नेता या प्रणेता! तेरा ठीक तो ईमान है?
पर, दिया जाता अब देश मे न कान है।
बने जाते कल-कारखाने आलीशान भी,
साथ-साथ तेरे कुछ अपने मकान भी।"

"भाई, बकने दो उन्हे, तुम तो सुजान हो,
कविता बनाते हो, हमारे अभिमान हो।
मान लो, कभी जो चूर-बुन थोडा पाते है,
भारत से बाहर तो फेक नही आते है।
जो भी बनवाये, अपना ही व' भवन है,
देश मे ही रहता है देश का जो धन है।"

"और, अरे यार! तू तो बडा शेर-दिल है,
बीच राह मे ही लगा रखी महफिल है!
देख, लग जायँ नही मोटर के झटके,
नाचना जो हो तो नाच सडक से हटके।"

"सडक से हट तू ही क्यो न चला जाता है?
मोटर मे बैठ बडी शान दिखलाता है!
झाड देंगे, तुझमे जो तडक भडक है,
टोकने चला है, तेरे बाप की सडक है?

सिर तोड देंगे, नही राह से टलेंगे हम,
हाँ, हाँ जैसे चाहे, वैसे नाच के चलेंगे हम।
बीस साल पहले की शेखी तुझे याद है।
भूल ही गया है, अब भारत आजाद है।"

(२)

सुनिये क्रोपाटकिन - गोरकी!
भारत मे फैली है आजादी बडे जोर की।
सुनता न कोई फरियाद है।
देखिये जिसे ही, वही जोर से आजाद है।

लोग है आजाद बिललाने को।
नेता है आजाद जहाँ चाहे, वहा जाने को।
अफसर परम स्वतन्त्र है।
मन्त्रीजी हजार पढे, लगते न मन्त्र है।
साहब तो खुद परीशान है।
चपरासी देते उन्हे पानी न तो पान हे।

अजब हमारा यह तन्त्र है।
नकली दवाइयो का व्यापारी स्वतन्त्र है।
पुलिस करे जो कुछ, पाप है।
चोर का जो चाचा है, पुलिस का भी बाप है।
अखबार मुक्त है चुपाने को,
विज्ञापनदाताओ का मरम छुपाने को।

और छात्र बडे पुरजोर है,
कालिजो मे सीखने को आये तोड-फोड है।
कहते हे पाप है समाज मे,
धिक् हम पे ! जो कभी पढे इस राज मे।
अभी पढने का क्या सवाल है ?
अभी तो हमारा धम एक हडताल है।

कोई नही कैद है कपाट मे,
हाट मे जो आया नही, होगा अभी बाट मे।
हाथ मे हो केक या कि रोटी हो,
सूट मे हो लैस या कि पहने लॅगोटी हो,
कवि हो कि नेता हो कि छात्र हो,
या कि ठेला हॉकता हो, करुणा का पात्र हो,
एक बात मे सभी समान है,
दूसरो की बात पे न देते कभी कान है।

हलचल बडी है बाजार मे,
कोई पाव-पैदल, चढा है कोई कार मे।
लेकिन, सभी की यह टेक है,
अब किसी मे भी नही बुद्धि या विवेक है।
सरकार से न यदि ऊबेगा,
डूबेगा, अवश्य, यह सारा देश डूबेगा।

(३)

सोच-सोच आनन मलीन है,
एक ओर पाकिस्तान, एक ओर चीन ह।
समझ न पडता चरित्र है,
रूस-अमरीका मे से कौन बडा मित्र है।

दोस्त ही है, देख के डरो नही।
कम्यूनिस्ट कहते है, चीन से लडो नही।
चिन्तन मे सोशलिस्ट गक है,
कम्यूनिस्ट और कागरेसी मे क्या फक है?
जनसघी भारतीय शुद्ध ह।
इसीलिए, आज महावीर बडे क्रुद्ध है।

और कागरेसी भी तबाह है।
ठीक-ठीक जान ही न पाता, कौन राह है।
दायाँ या कि बायाँ? कौन ठीक है?
पूछता है, यार, गाँधीजी की कौन लीक है?

एक कहता है "चलो रूस को।"
दूसरा है चीखता कि 'मारो मनहूस को।
वाणी की स्वतन्त्रता प्रमुख है।
चुप रहने से बडा और कौन दु ख है?"

"तो फिर अमेरिका की बात हो?"
"लोभी, मेरे मस्तक पै भारी वज्रपात हो।
गाँधीजी की बात नही याद है?
आदमी को यन्त्र कर देता बरबाद है।"

"तो फिर चलाये, चलो, तकली।"
"हम गाँधीजी के भक्त होगे नही नकली।
दबा नही अपने को पायेगे,
गाँधीजी के पास हरगिज नही जायेगे।"

"तब तुम्ही बोलो, हम क्या करे?"
"चाय पिये और जी मे आये जो, बका करे।
बकना ही असली स्वराज है।
बाकी तो जहाँ भी देखो डाकुओ का राज है।"

भोर मे पुकारो मरदार को,
जीत मे जो बदल देते थे कभी हार को।
तब कहो, ढोल की य' पोल है,
नेहरू के कारण ही सारा गण्डगोल है।

फिर जरा राजाजी का नाम लो।
याद करो जे०पी० को, विनोबा को प्रणाम दो।
तब कहो, लोहिया महान हे।
एक ही तो वीर यहाँ सीना रहा तान है।

ऊपर बढे जो और गरमी,
एक बारगी दो छोड बची-खुची नरमी।
कहो, राम ! तिमिर मे राह दो,
डिमोक्रेसी दूर करो, हमे तानाशाह दो।

और फिर माला ले के हाथ मे
देवता से माँगो वरदान आधी रात मे।
दूर रखो हमको गुनाह से,
देश को बचाये रखो राम ! तानाशाह से।

क्षमा करो, क्षमा, मन्द मति हे,
नेहरू को छोड हमे और नही गति है।
और जब पुन प्रकाश हो,
बोलो, कागरेसियो ! तुम्हारा सवनाश हो।

(४)

जहाँ भी सुनो, वही आवाज है,
भारत मे आज, बस, जोभ का स्वराज है।
और मन्त्री भी न अग्रमुख है।
एक कैबिनेट के अनेक यहाँ मुख हे।

एक कहता है, हाहाकार है,
दाम पै लगाम कसो, देश की पुकार है।
दूसरे की मति अति शुद्ध है,
कहता है, नीति यह धम के विरुद्ध ह।

गाँधीजी की याद नही टेक है?
पूँजीपति और जनता का भाग्य एक है।
आजादी की धार घहराने दो,
जो भी चाहता हो, उसे छूट के कमाने दो।

(५)

चिन्तको मे अजब उमग है।
जनता चकित और सारा विश्व दग है।
एक कहता है, किस बात मे
हम है स्वतन्त्र, यदि लाठी नही हाथ मे?

घूम रहा देश किस ध्यान मे,
बकरी का दूध पीके शेरो के जहान मे?
वही है स्वतन्त्र, जो समथ है,
परमाणु-बम जो नही तो सब व्यर्थ है।

दूसरा है रोता, विवि वाम है।
सेनाओ का गाधीजी के देश मे क्या काम ह ?
अहिसा का तत्त्व यदि जानते,
हाय नेहरू जो गाधीजी को पहचानते,
सीमा पर शत्रु कोई आता क्यो ?
आँखे दिखला के हमे कोई धमकाता क्यो ?
भीति युद्ध-बीज सदा बोती हे।
शस्त्र जहाँ रहते है, हिसा वही होती है।

(६)

राम जाने, भीतर क्या बल है !
तब भी बखूबी यह देश रहा चल है।
गण, जन, किसी का न तन्त्र है।
साफ बात यह है कि भारत स्वतन्त्र है।
भिन्नता सँभाले तार-तार की,
राज करती है यहाँ चैन से 'एनारकी'।

११-१० ६२ ई०]

एक बार फिर स्वर दो ?

एक बार फिर स्वर दो।
अब भी वाणीहीन जनो की दुनिया बहुत बडी है।
आशा की बेटियाँ आज भी नीडो मे सोती है
सुख से नही , विवश उडने के पख नही होने से,
और मूक इसलिए कि उनके कण्ठ नही खुलते है।
सोचा है यह कभी कि गूगापन कैसी पीडा है ?
भीतर-भीतर दद भोगना, लेकिन, बँटा न पाना
उसे किसी से कह कर, मेरे मन को चोट लगी है।
बोल नही सकता जो, उसका भी दुख कोई दुख है ?
कितने लोग समझते है भाषा उदास आँखो की ?

एक बार फिर स्वर दो।
मूक, उदासी - भरे, दीन बेटे सम्पन्न मही के
मृत्यु-विवर के पास आज भो जीवन खोज रहे है।
उभर रही कोपले भेद कर सडे हुए पत्तो को,
छाल तोड कर कढने को टहनी छटपटा रही है।
प्रसवालय मे घात लगाये खडी मृत्यु के मुख से
बचा नस भागी लेकर जिस नन्हे-से जीवन को,
देखा, वह कैसे हँसता था ? मानो, समझ गया हो,
'अच्छा ! यहाँ जन्म लेते ही यह सब भी होता है ?'
और मृत्यु किस भाँति पराजय पर फुकार रही थी ?

एक बार फिर स्वर दो।
जो अदृश्य से निकल जन्म लेने के लिए विकल है,
आगाही दो उन्हे, यहा जीवन की कनक-पुरी मे
पहले दरवाजे पर भी साँपो की कमी नही है,
आगे तो ये दुष्ट और भी बढते ही जाते है।
और दु ख तो यह कि यहा कुछ पता नही करुणा का,
डँसे एक को सप अगर तो दस मिल कर हँसते है।
कहो जन्म लेनेवालो से, सोच-समझ कर आये,
यहा भेडिये गुर्राते है बिना किसी कारण के
या इसलिए कि हम अपना शोणित न उन्हे देते है।

एक बार फिर स्वर दो।
उन्हे, प्रेम-गृह मे जो सपनो से प्रमत्त आये थे,
लेकिन, अब वाणिज्य देख, विस्मय से, ठमक गये है।
और उन्हे जो भ्रम-विनाश की चोट हृदय पर खाकर
इस गृह से चुपचाप निकल निर्जन मे चले गये है।

एक बार फिर स्वर दो।
कहो जन्म लेनेवाले से, जिन अप्रतिम गुणो से
भेज रही है प्रकृति, बडे नाजो से, उन्हे सजा कर,
सब से पहले उन्ही गुणो की भू पर लूट मचेगी।
वृक, शृगाल, अहि, रँगी चोचवाली कठोर गृध्रिणियाँ,
सब टूटेगे एक साथ, सघष भयानक होगा।
बडी बात होगी, इन तूफानो से अगर बचा कर,
किसी भाति अन-बुझे दीप वे वापस ले जायेगे।

२५ ५ ६० ई०]

एक बार फिर स्वर दो

एक बार फिर स्वर दो।
जिस गगा के लिए भगीरथ सारी आयु तपे थे,
और हुई जो विवश छोड अम्बर भू पर बहने को
लाखो के आसुओ, करोडो के हाहाकारो से,
लिये जा रहा इन्द्र कैद करने को उसे महल मे।
सीचेग। वह गृहोद्यान अपना इसकी धारा से
और भगीरथ के हाथो मे डण्डा थमा कहेगा,
अगर माक्स को मार सके तुम, हम तुमको पूजेगे,
हार गये तो, गगा की धारा जो ले आये हो,
उसी धार मे बोर-बोर हम तुम्हे मार डालेगे।

एक बार फिर स्वर दो।
देख रहे हो, गावो पर कैसी विपत्ति आयी है?
तन तो उसका गया, नही क्या मन भी शेष बचेगा?
चुरा ले गया अगर भाव-प्रतिमा कोई मदिर से,
उन अपार, असहाय, बुभुक्षित लोगो का क्या होगा,
जो अब भी है खडे मौन गाँधी से आस लगा कर?

एक बार फिर स्वर दो।
कहो, सवत्यागी वह सचय का सन्तरी नही था,
न तो मित्र उन साँपो का जो दशन विरच रहे हैं
दश मारने का अपना अधिकार बचा रखने को।

एक बार फिर स्वर दो।
उन्हे पुकारो, जो गाँधी के सखा, शिष्य, सहचर है।
कहो, आज पावक मे उनका कचन पडा हुआ है।
प्रभापूण हो कर निकला यह तो पूजा जायेगा,
मलिन हुआ तो भारत की साधना बिखर जायेगी।

एक बार फिर स्वर दो।
कहो, शान्ति का मन अशान्त है, बादल गुमर रहे है,
तप्त, ऊमसी हवा टहनियो मे छटपटा रही है।
गाधी अगर जीत कर निकले, जलधारा बरसेगी,
हारे तो तूफान इसी ऊमस से फूट पडेगा।

२६ ५-६१ ई०]

तब भी आता हूँ मै

टूट गये युग के दरवाजे ?
बन्द हो गयी क्या भविष्य की राह ?
तब भी आता हूँ मै।

बल रहने ऐसी निबलता,
स्वर रहते स्वरवालो के शब्दो का अर्थाभाव !
दोपहरी मे ऐसा तिमिर नही देखा था।

खिसक गयी शृखला सितारो की ? प्रकाश के
पुत्र वहाँ अब नही, जहाँ पहले उगते थे ?

मही छूट सहसा विश्वम्भर के प्रबन्ध से,
सचमुच ही, पड गयी मनुष्यो के हाथो मे ?

धुआँ, धुआ सब ओर, चतुर्दिक् घुटन भरी है,
आख मूँदने पर भी तो अब दीप्ति न आती।
तिमिर-व्यूह है ध्यान, गीत का मन काला है,
धूम-ध्वान्त फूटता कला की रेखाओ से।

तो यह सब क्या, इसी भाँति, चलता जायेगा ?
यह विषपूर्ण प्रवाह ? कुटिल यह घुटन प्राण की ?
और वायु क्या इसी भाँति भरती जायेगी
वणिक-तुला पर चढी बुद्धि के फूत्कारो से ?

ना, गाँधी सेठो का चौकीदार नहीं है,
न तो लौहमय छत्र जिसे तुम ओढ बचा लो
अपना सचित कोष माक्स की बौछारो से।

इस प्रकार मत पियो, आग से जल जाओगे,
गाँधी शरवत नही, प्रखर पावक-प्रवाह था।
घोल दिया यदि इस्र कही अपनी शीशी का,
अनलोदक दूषित-अपेय यह हो जायेगा।

ओ विशाल तम-तोम, चतुर्दिक् घिरी घटाओ !
कब जनमेगी अशनि तुम्हारी व्याकुलता से ?
धुओ और ऊमस मे जो छटपटा रहा है,
वह प्रकाश कब तक खुलकर बाहर आयेगा ?

दोपहरी का अन्धकार ! ओ सूय, तुम्हारा
करने को उद्धार व्योम पर आते है हम,
आविष्कृत कर क्या नया प्रेम, शब्दो के भीतर
मूर्च्छित अर्थो को फिर आज जिलाते है हम।

पढो, सामने के अक्षर क्या कहते है ये?
विनय विफल हो जहा, वाण लेना पडता है।
स्वेच्छा से जो न्याय नही देता है, उसको
एक रोज आखिर सब कुछ देना पडता है।

टूट गये युग के दरवाजे?
बन्द हो गयी क्या भविष्य की राह?
तब भी आता हूँ मै।

१८ ५ ६० ई०]

KEXAMS

समर शेष है

ढीली करो धनुष की डोरी, तरकस का कस खोलो,
किसने कहा, युद्ध की वेला गयी, शान्ति से बोलो ?
किसने कहा, और मत बेधो हृदय वह्नि के शर से,
भरो भुवन का अग कुकुम से, कुसुम से, केसर से ?
कुकुम ? लेपू किसे ? सुनाऊँ किसको कोमल गान ?
तडप रहा आँखो के आगे भूखा हिन्दुस्तान।

फूलो की रगीन लहर पर ओ उतरानेवाले !
ओ रेशमी नगर के वासी ! ओ छवि के मतवाले !
सकल देश मे हालाहल है, दिल्ली मे हाला है,
दिल्ली मे रौशनी, शेष भारत मे अँधियाला है।
मखमल के पर्दों के बाहर, फूलो के उस पार,
ज्यो का त्यो है खडा आज भी मरघट-सा ससार।

वह ससार जहाँ पर पहुँची अब तक नही किरण है,
जहाँ क्षितिज है शून्य, अभी तक अम्बर तिमिर-वरण है।
देख जहाँ का दृश्य आज भी अन्तस्तल हिलता है,
मा को लज्जा-वसन और शिशु को न क्षीर मिलता है।
पूछ रहा है जहाँ चकित हो जन-जन देख अकाज,
सात वष हो गये, राह मे अटका कहा स्वराज ?

अटका कहाँ स्वराज ? बोल दिल्ली ! तू क्या कहती है ?
तू रानी बन गयी, वेदना जनता क्यो सहती है ?
सबके भाग दबा रक्खे है किसने अपने कर मे ?
उतरी थी जो विभा, हुई वन्दिनी, बता, किस घर मे ?
समर शेष है, यह प्रकाश बन्दी-गृह से छूटेगा,
और नही तो तुझ पर पापिनि ! महावज्र टूटेगा।

समर शेष है, इस स्वराज्य को सत्य बनाना होगा।
जिसका है यह न्यास, उसे सत्वर पहुँचाना होगा।
धारा के मग मे अनेक पर्वत जो खडे हुए है,
गगा का पथ रोक इन्द्र के गज जो अडे हुए है,
कह दो उनसे, झुके अगर तो जग मे यश पायेगे,
अडे रहे तो ऐरावत पत्तो-से बह जायेगे।

समर शेष है, जनगगा को खुल कर लहराने दो,
शिखरो को डूबने और मुकुटो को बह जाने दो।
पथरीली, ऊँची जमीन है ? तो उसको तोडेगे।
समतल पीटे बिना समर की भूमि नही छोडेगे।
समर शेष है, चलो ज्योतियो के बरसाते तीर,
खण्ड-खण्ड हो गिरे विषमता की काली जजीर।

समर शेष है, अभी मनुज-भक्षी हुकार रहे हैं।
गाधी का पी रुधिर, जवाहर पर फुकार रहे है।
समर शेष है, अहकार इनका हरना बाकी है,
वृक को दन्तहीन, अहि को निर्विष करना बाकी है।
समर शेष है, शपथ धर्म की, लाना है वह काल,
विचरे अभय देश मे गाँधी और जवाहर लाल।[1]

तिमिरपुत्र ये दस्यु कही कोई दुष्काण्ड रचे ना!
सावधान, हो खडी देश भर मे गाधी की सेना।
बलि देकर भी बनी! स्नेह का यह मृदु व्रत साधो रे!
मन्दिर औ' मस्जिद, दोनो पर एक तार बाँधो रे!
समर शेष है, नही पाप का भागी केवल व्याध
जो तटस्थ है, समय लिखेगा उनका भी अपराध।

१९५३ ई०]

१ जवाहर लाल नहरू पर एक व्यक्ति ने छुरा चलाने की कोशिश की थी।

जवानी का झण्डा

घटा फाड कर जगमगाता हुआ
आ गया देख, ज्वाला का वाण,
खडा हो, जवानी का झण्डा उडा,
ओ मेरे देश के नौजवान!

(१)

सहम करके चुप हो गये थे समुन्दर
अभी सुनके तेरी दहाड,
जमी हिल रही थी, जहाँ हिल रहा था,
अभी हिल रहे थे पहाड।
अभी क्या हुआ, किसके जादू ने आ करके
शेरो की सी दी जुबान?
खडा हो, जवानी का झण्डा उडा,
ओ मेरे देश के नौजवान!

(२)

खडा हो कि धौसे बजा कर जवानी
सुनाने लगी फिर धमार,
खडा हो कि अपने अहकारियो को
हिमालय रहा है पुकार।

खडा हो कि फिर फूक विष की लगा
धूजटी ने बजाया विषाण,
खडा हो, जवानी का झण्डा उडा,
ओ मेरे देश के नौजवान !

(३)

गरज कर बता सबको, मारे किसी के
मरेगा नही हिन्द - देश,
लहू की नदी तैर कर आ रहा है
कही से कही हिन्द - देश।
लडाई के मैदान मे चल रहे ले के
हम उसका उडता निशान,
खडा हो, जवानी का झण्डा उडा,
ओ मेरे देश के नौजवान !

(४)

अहा ! जगमगाने लगी रात की
माँग मे रौशनी की लकीर,
अहा ! फूल हँसने लगे, सामने
देख, उडने लगा वह अबीर।
अहा ! यह उषा होके उडता चला
आ रहा देवता का विमान,
खडा हो जवानी का झण्डा उडा,
ओ मेरे देश के नौजवान !

□□□

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर

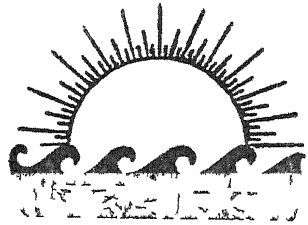

राष्ट्रकवि दिनकर पथ
राजेन्द्रनगर, पटना ८०००१६